समाज विकासमाला

महर्षि अगस्त्य

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

समाज-विकास-माला : ६६

महर्षि अगस्त्य

दक्षिण में पहली बार जानेवाले ऋषि का परिचय

लेखक
अवधनंदन

संपादक
यशपाल जैन

१९५९
सस्ता साहित्य मंडल-प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

पहली बार : १९५९
मूल्य
सैंतीस नये पैसे

मुद्रक
युगांतर प्रेस
दिल्ली

समाज-विकास-माला

हमारे देश के सामने आज सबसे बड़ी समस्या करोड़ों आदमियों की शिक्षा की है। इस दिशा में सरकार की ओर से यदि कुछ कोशिश हो रही है, तो वही काफी नहीं है। यह बड़ा काम सबकी सहायता के बिना पार नहीं पड़ सकेगा।

बालकों तथा प्रौढ़ों की पढ़ाई की तरफ जबसे ध्यान गया है, ऐसी किताबों की मांग बढ़ गई है, जो बहुत ही आसान हों, जिनके विषय रोचक हों, जिनकी भाषा मुहावरेदार और बोल-चाल की हो और जो मोटे टाइप में बढ़िया छपी हों।

इस पुस्तक-माला को हमने इन्हीं बातों को सामने रखकर चालू किया है। इसमें कई पुस्तकें निकल चुकी हैं। इन सबकी भाषा बड़ी आसान है। विषयों का चुनाव सावधानी से किया गया है। छपाई-सफाई के बारे में भी विशेष ध्यान रखा गया है। हर किताब में चित्र भी देने की कोशिश की है।

यदि पुस्तकों की भाषा, शैली, विषय और छपाई में पाठकों को सुधार की गुंजाइश मालूम हो, तो उसकी सूचना निस्संकोच देने की कृपा करें।

—मंत्री

पाठकों से

अगस्त्य मुनि का नाम बहुत-से पाठकों ने सुना होगा। विंध्याचल पहाड़ को पार करके दक्षिण में जाने वाले वही पहले आदमी थे। अब तो हम रेल में बैठकर कहीं-के-कहीं पहुंच जाते हैं; लेकिन अगस्त्य महाराज ने तो यह यात्रा उन दिनों की, जबकि रेल आदि कुछ भी नहीं थे। कितनी मुसीबतें उठानी पड़ी होंगी उन्हें और कितना समय लगा होगा।

इस किताब में इन्हीं महर्षि की कहानी दी गई है। इसे पढ़कर आपको पता चलेगा कि उन्होंने कितनी हिम्मत का काम किया और उससे हम लोगों को कितना लाभ हुआ।

हमें विश्वास है कि इस पुस्तक को पढ़कर पाठकों को ऐसे हौसले के काम करने की प्रेरणा मिलेगी, जिनसे आदमी बड़ा बनता है और उसका नाम अमर होता है।

—संपादक



अगस्त्य मुनि

महर्षि अगस्त्य

: १ :

महाभारत में एक कथा आती है। एक बार विंध्याचल को किसी बात पर गुस्सा आ गया। वह सूरज और चंदा की गति को रोकने के लिए ऊपर की ओर बढ़ने लगा। यह देखकर देवता विंध्याचल के पास गये और उसका बढ़ना रोकने का उपाय करने लगे। लेकिन विंध्याचल किसी भी तरह उनका कहना मानने के लिए तैयार न हुआ। तब सब देवता मिलकर अगस्त्य मुनि के यहां गये। अगस्त्य बहुत बड़े महात्मा थे। देवताओं ने उनसे कहा, "हे मुनिवर, विंध्याचल गुस्से में आकर ऊपर की ओर बढ़ता जा रहा है और सूरज, चंदा और तारों की गति को रोकने का प्रयत्न कर रहा है। आपके सिवा और कोई भी उसको ऐसा करने से नहीं रोक सकता। आप कृपा करके हमारी मदद कीजिये।"

देवताओं की बात सुनकर अगस्त्य विंध्याचल के

पास गये। विंध्याचल ने उनको प्रणाम करने के लिए अपना सिर नीचे किया। मुनि ने कहा, "हे पर्वतराज, मैं किसी काम से दक्षिण दिशा को जा रहा हूं। तुम मुझे जाने का रास्ता दो।"

विंध्याचल ने कहा, "जो आज्ञा!"

महर्षि ने कहा, "एक बात और है। जबतक मैं लौट कर न आऊं तबतक तुम नीचे ही झुके रहो। मैं लौटकर आ जाऊं तब तुम जितना चाहो बढ़ जाना।"

अगस्त्य मुनि यह कहकर दक्षिण की ओर चले गये। फिर वे लौटकर नहीं आये। विंध्याचल उनकी बात मानकर ज्यों-का-त्यों बना रहा, बढ़ा नहीं।

अगस्त्य मुनि सबसे पहले आर्य थे जो विंध्य पर्वत को पार करके दक्षिण भारत में आये। इसी बात को महाभारत लिखनेवाले ने कितने सुंदर और रोचक ढंग से कहा है।

आज से कोई ढाई हज़ार साल पहले की बात है। आर्य लोग सारे उत्तर भारत में फैल चुके थे। पंजाब से लेकर बंगाल तक और हिमालय से लेकर गोदावरी नदी के किनारे तक, आर्यों की बस्तियां आबाद हो चुकी थीं। लेकिन दक्षिण भारत? वह तो आर्य लोगों के लिए बिलकुल ही अनजानी जगह थी। उन्हें पता भी न था कि वहां क्या है और क्या हो रहा है।

भारत के बीचोंबीच विंध्यपर्वत अपना सिर ऊंचा किये खड़ा था। जिस तरह हिमालय उत्तर की ओर से भारत की रक्षा करता है, उसी तरह विंध्याचल दक्षिणापथ को घेरकर रहता है। उसके घोर जंगल, गहरी नदियां, जंगली और हिंसक पशुओं से भरी भूमि बड़ी विकट थी। इनको पार करना आसान न था। कौन ऐसा माई का लाल था, जो उसे पार करके दक्षिणापथ में पैर रख सके? इसीलिए बहुत समय तक आर्य लोग गंगा, जमुना के आसपास ही रहे। दक्षिण जाने का साहस न कर सके।

पर आर्यों के समाज में बहुत से साधु-संन्यासी भी थे, जो बड़े घुमक्कड़ स्वभाव के थे। वे एक जगह में चुप होकर बैठना नहीं जानते थे। आज यहां तो कल वहां। आज भी तो हमारे देश में बहुत-से साधु-संन्यासी हैं, जो घूम-घूमकर तीर्थों की यात्रा और देवालयों के दर्शन करना ही अपना धर्म समझते हैं। ऐसे ही घुमक्कड़ों की एक टोली के मुखिया महर्षि अगस्त्य भी थे। उन्हें आर्य-धर्म और आर्य-संस्कृति का बड़ा गर्व था। वे उसे सारी दुनिया के लोगों में फैलाना चाहते थे। उन्होंने दक्षिण में जाकर अपने धर्म और संस्कृति का प्रचार करने की प्रतिज्ञा की और चल पड़े।

दक्षिण में पहुंचने के पहले विंध्याचल पर्वत को

पार करना पड़ता था। यह पर्वत तो घमंड से अपना सिर आसमान में उठाये खड़ा था। पर अगस्त्य की चतुराई से उसका सिर झुक गया। घने जंगलों की जगह छायादार पेड़ रह गये। जंगली पशुओं का डर जाता रहा। पानी से भरी हुई गहरी नदियां छिछले नाले जैसी हो गईं। सच है, दुनिया की कोई भी चीज़ हिम्मत वाले आदमी का रास्ता नहीं रोक सकती।

अगस्त्य विंध्याचल को पार कर दक्षिणापथ में पहुंच गये। इस पर्वतराज के कारण आर्यों के दिल में जो डर था, वह दूर हो गया। अगस्त्य ने अपनी हिम्मत और बहादुरी से आर्यों के लिए दक्षिण का रास्ता खोल दिया। तब से आर्य ऋषि-मुनि दक्षिण में जाकर अपने आश्रम बनाने और अपने धर्म का प्रचार करने लगे।

: २ :

विंध्याचल को पार करके अगस्त्य मुनि वातापि पहुंचे। यह स्थान कर्नाटक प्रदेश में है और आजकल 'वादामि' के नाम से पुकारा जाता है। यह हिंदुओं के लिए एक बड़ा तीर्थ भी है।

उस जमाने में ऋषि-मुनि शादी-ब्याह भी करते थे और उनके बच्चे भी होते थे। पर वे अपने परिवार के साथ आश्रमों में फलमूल खाकर रहते थे और समाज की सेवा करते थे। अगस्त्य मुनि ने भी विवाह करने का

निश्चय किया। वे विदर्भ के राजा के यहां पहुंचे। विदर्भ-राज के एक बड़ी सुंदर कन्या थी, जिसका नाम था लोपामुद्रा। मुनि राजा के पास जाकर बोले—"हे राजन्, मैं विवाह करना चाहता हूं। तुम अपनी लड़की मुझे ब्याह दो।"

यह सुनकर राजा बहुत दुःखी हुआ। कहां उसकी सुंदर और सुकुमार कन्या और कहां दाढ़ी वाले साधु बाबा! न रहने का ठिकाना, न खाने-पीने का!

राजा ने हाथ जोड़कर अगस्त्य से विनती की—"महाराज, आप साधु-महात्मा हैं। देश-विदेश में घूमते



राजा ने हाथ जोड़कर कहा, "आप साधु-महात्मा हैं।"

रहते हैं। हर तरह की मुसीबतें सहने के आदी हो गये हैं। मेरी लड़की बड़े नरम स्वभाव की और सुकुमार है। हवा और धूप उसने कभी नहीं सही। कष्ट का नाम तक नहीं जानती। भला वह आपके साथ कैसे रह सकती है?"

पर अगस्त्य मुनि ने कहा, "देखो राजन्, मुझे संतान पाने की बड़ी इच्छा है। मैं निपूता होकर मरना नहीं चाहता। अगर मैं बिना संतान के मरा तो मेरे पितरों को भी दुख होगा और लोग मुझे बुरा-भला कहेंगे। तुम्हारी लड़की मुझे पसंद आ गई है। मैं उसको बड़े आराम से रखूंगा। मैं जहां-जहां जाऊंगा, वहां-वहां वह मेरे साथ जायगी। देश-विदेश में घूमेगी। उसको कोई कष्ट नहीं होगा। तुम बेखटके उसका विवाह मेरे साथ कर दो।"

राजा अगस्त्य मुनि को और उनके प्रभाव को जानता था। उनका आग्रह देखकर उससे इन्कार करते न बना। आखिर वह राजी हो गया। लोपामुद्रा का विवाह अगस्त्य मुनि के साथ हो गया।

पर लोपामुद्रा बड़े विचित्र स्वभाव की थी। राजा की लड़की जो ठहरी। उसने ऋषि से कहा, "महाराज, मैं राजा की बेटी हूं। मैं अपने घर में पलंग पर सोती थी। सुंदर गहने और कपड़े पहनती थी। मैं

गेरुए कपड़े और पेड़ की छाल पहनकर आपके साथ नहीं रहूंगी। आप मेरे लिए सुंदर गहने और बढ़िया कपड़े ला दीजिए। आप भी मोतियों की माला और गहने पहनिए। तभी मैं आपके साथ रहूंगी, नहीं तो अपने पिता के घर चली जाऊंगी।"

अपनी पत्नी की बात सुनकर मुनि ने कहा, "हे लोपा, तुम्हारा कहना सच है। लेकिन तुम्हारे पिता राजा हैं। उनके पास बहुत धन है। हम तो साधु-संन्यासी हैं। हमारे पास इतना पैसा कहां कि हम सुंदर कपड़े और गहने खरीदें।"

लोपा बोली, "आप तपस्वी हैं। सब आपका मान करते हैं। किसी राजा के पास जाइये और धन मांगकर मेरी इच्छा पूरी कीजिये। मेरी इच्छा पूरी होगी तभी मैं आपके साथ रहूंगी। मैं इस तरह तापसिन और भिखारिन बनकर नहीं रहना चाहती।

स्त्री की बात सुनकर मुनि महाराज बड़ी चिंता में पड़े। पर अपनी पत्नी को नाराज करना उनके लिए कठिन था। आखिर बेचारे ने राजाओं के पास जाकर धन मांगने का निश्चय किया।

वे एक के बाद एक करके कई राजाओं के पास गये और अपनी बात कहकर उनसे धन मांगा। राजा लोग उनकी कथा सुनकर हंस पड़े। किसी ने कहा, "महाराज,

आपका धर्म तो सबकी भलाई करना है। आप शादी-ब्याह के झमेले में क्यों पड़े ? शादी-ब्याह करना तो हम जैसे लोगों को शोभा देता है, आपको नहीं।"

कुछ ने अपनी लाचारी दिखाते हुए कहा, "महाराज, राज्य का खर्च इतना है कि हमारे पास कुछ बचता ही नहीं। हम आपको धन दें तो कहाँ से ?"

राजाओं की बातें सुनकर अगस्त्य बहुत परेशान हुए। आखिर उन्हें पता चला कि दानवों के राजा इल्वल के पास अपार धन है। उन्होंने उसीके पास जाकर धन मांगने का निश्चय किया।

इल्वल और वातापि दो भाई थे। दोनों बड़े प्रतापी थे। लोगों को सता-सताकर उन्होंने बहुत-सा धन इकट्ठा कर लिया था। आर्य लोगों के तो वे कट्टर दुश्मन थे। आर्य ऋषि-मुनियों को मार डालना, उनके बरतन-भांड़े लूट लेना, उनके बाएं हाथ का खेल था। अपने अतिथियों को मारकर उनका धन लूट लेने का उन्होंने एक नया उपाय निकाला था। जब कोई अतिथि उनके यहां आता तो वातापि बकरे का रूप धर लेता। इल्वल उसको मारकर उसका मांस पकाता और अतिथियों को खिला देता। वातापि को वरदान था कि वह जो रूप चाहे धारण कर सकता था और मरकर भी जी सकता था। जब अतिथि भोजन कर

चुकते तब इल्वल अपने भाई को पुकारता और वातापि अतिथियों का पेट फाड़कर बाहर निकल आता।

एक बार एक विद्वान् और तपस्वी ब्राह्मण इल्वल के यहां आया। इल्वल ने उसकी खूब आव-भगत की। इसके बाद ब्राह्मण से कहा, "मुझे ऐसा वर दो कि मेरे इन्द्र जैसा प्रतापी पुत्र हो।" पर ब्राह्मण इस प्रकार का वर देने के लिए राजी न हुआ। इसपर इल्वल को क्रोध आ गया। उसने ब्राह्मण से इसका बदला लेना चाहा। उसने वही उपाय किया जो दूसरे अतिथियों को मारने के लिए किया करता था। अपने भाई वातापि



वातापि अतिथि का पेट फाड़कर निकल आया

को बकरे के रूप में बदल दिया और उसका मांस पकाकर उस ब्राह्मण को खिलाया। ब्राह्मण जब भोजन कर चुका तब इल्वल ने वातापि को पुकारा। ब्राह्मणों का शत्रु वातापि, अपने बड़े भाई की आवाज़ सुनकर ब्राह्मण का पेट चीरकर हँसता हुआ बाहर निकल आया। बेचारा ब्राह्मण वहीं मर कर ढेर हो गया। इसी प्रकार छल करके उस मांस खानेवाले राक्षस ने हज़ारों ब्राह्मणों को मार डाला। उसके डर से किसी अच्छे आदमी का उस रास्ते से जाना कठिन हो गया।

इल्वल और वातापि की यह कथा सुनकर अगस्त्य के साथी बहुत घबराये। लेकिन मुनि ने कहा, "तुम लोग घबराओ नहीं। मैं इन दानवों को आज एक अच्छा पाठ पढ़ाऊंगा।" इतना कहकर अगस्त्य उन राक्षसों के पास गये। इल्वल ने उनका स्वागत किया और वातापि का मांस पकाकर उनको भोजन परोसा। अगस्त्य आसन लगाकर बैठ गये और सारा मांस खुद खा गये। इल्वल मन-ही-मन खुश हो रहा था कि अब थोड़ी देर में मुनि महाराज की जीवन-लीला खत्म हो जायगी।

जब मुनि भोजन करके उठे तब इल्वल अपने भाई को पुकारने लगा—"वातापि, वातापि, निकल आ!" पर पहले की भांति वातापि फौरन हंसता हुआ निकल नहीं आया। इल्वल बार-बार चिल्लाने लगा कि ओ

भाई वातापि, तुम आजाओ, पर वातापि आता उसे नहीं दिखाई दिया। उसका चिल्लाना सुनकर अगस्त्य हंसकर बोले, "हे इल्वल, तू व्यर्थ चिल्लाता है! वातापि भला अब कैसे बाहर निकल सकता है? मैंने तो उसे खाकर पचा भी डाला!" यह कहकर उन्होंने अपने पेट पर हाथ फेरा।

वातापि को पचा हुआ देखकर इल्वल की सिट्टी गायब हो गई। घबराहट के मारे वह पसीने-पसीने हो गया। हाथ जोड़कर अगस्त्य के सामने खड़ा हो गया और बोला, "महाराज, मुझे बताइये, आपको क्या चाहिए? हम सब प्रकार से आपकी सेवा करने को तैयार हैं।"

अगस्त्य ने हंसकर कहा, "हमने सुना है कि तुम बड़े धनी हो। हमको अपनी पत्नी के वास्ते गहने और कपड़े खरीदने के लिए कुछ धन चाहिए। मैं इसी काम से यहां आया हूं।"

इल्वल ने अगस्त्य को जितना चाहिए था, उतना धन दिया। गहने-कपड़े भी दिये। अगस्त्य संतुष्ट हुए। उन्होंने लोपामुद्रा को सुंदर कपड़ों और गहनों से सजाकर प्रसन्न किया।

उधर वातापि के मरने से राक्षस बहुत डर गये और अगस्त्य मुनि की धाक सारे दक्षिण में जम गई।

: ३ :

वातापि को मारने और लोपामुद्रा को प्रसन्न करने के बाद महर्षि अगस्त्य गोदावरी नदी के किनारे पंचवटी के पास एक वन में चले गये। वह वन बड़ा ही रमणीक और सुंदर था। चारों ओर ऊंची-ऊंची पहाड़ियाँ और बीच में गोदावरी चट्टानों से टकराती, बल खाती।

यहां पहुंच कर अगस्त्य ऋषि ने अपना आश्रम बनाया और कुछ वर्ष तक इसी वन में रहे। रामचंद्र ने लक्ष्मण और सीता के साथ वनों में घूमते हुए यहीं पर आकर अगस्त्य मुनि के दर्शन किये थे। अगस्त्य का आश्रम बहुत ही सुंदर था और सब प्रकार के मीठे फलों और खुशबूदार फूलों से भरा हुआ था। रामचंद्र ने लक्ष्मण से उनके आश्रम का वर्णन इस तरह किया था—

"हे लक्ष्मण, इन सुंदर पत्तों वाले पेड़ों और उनपर शांति से बैठे हुए पक्षियों और जंगली पशुओं को देखो। इनको देखकर मैं समझ गया कि महर्षि अगस्त्य का आश्रम अब दूर नहीं है। यह मुनि सारे संसार में अच्छे कर्मों के लिए प्रसिद्ध हैं। ये अगस्त्य नाम से विख्यात हैं। यहीं उनका आश्रम है। यहां आकर यात्रियों की थकावट दूर हो जाती है। आश्रम के वन में चारों ओर धुंआ उठ रहा है। यहां के सब हिरन शांत दिखाई देते

हैं और पक्षी मीठे शब्द बोल रहे हैं। हे लक्ष्मण, इन्हीं मुनि ने, मौत को अपने वश में करके, भलाई के लिए दक्षिण दिशा को अच्छे आदमियों के रहने योग्य बना दिया है। इन्हींके प्रभाव से राक्षस लोग डरते रहते हैं। वे दक्षिण दिशा की ओर देखते तो हैं, पर यहां आने का साहस नहीं करते। जबसे इन्होंने दक्षिण दिशा में निवास किया है तबसे यहां के सब राक्षस वैर-भाव छोड़कर शांति से रहते हैं। इन्हींके प्रभाव से यह दक्षिण दिशा तीनों लोकों में प्रसिद्ध हो गई है। विंध्य पर्वत अबतक इन्हींकी आज्ञा का पालन कर रहा है और उसने बढ़ना बंद कर दिया है। हे लक्ष्मण, यही उन बड़ी उम्र के अगस्त्य मुनि का आश्रम है। सब मुनि इनकी पूजा करते हैं। बहुत बड़े महात्मा हैं वे। सदा सज्जनों की भलाई में जुटे रहते हैं। इस आश्रम में देवता, गंधर्व, सिद्ध और महर्षि लोग सदा, थोड़ा भोजन करके, तपस्या करते रहते हैं और अगस्त्य मुनि की उपासना करते हैं।"

अगस्त्य ने जब सुना कि रामचंद्र उनके दर्शन के लिए आये हैं तो उन्होंने बड़े प्रेम से उनका स्वागत किया, उन्हें अपने आश्रम में ले गये और बढ़िया भोजन कराया। रामचंद्र भी मुनि से मिलकर बहुत प्रसन्न हुए।

अगस्त्य बड़े वीर और योद्धा भी थे। उनके पास कई प्रकार के हथियार थे। उन्होंने इल्वल और वातापि जैसे राक्षसों को हराया था। राक्षस उनके भय से कांपते रहते थे। रामचंद्र को देखकर अगस्त्य ने समझ लिया कि ये राजकुमार बड़े प्रतापी हैं। राक्षसों को मारने की शक्ति उनमें है और उनका नाश करने के लिए ही वे दक्षिण दिशा में आये हैं। तब उन्होंने अपने सब दिव्य अस्त्र रामचंद्र को दे दिये। उनके पास एक धनुष था, जिसमें हीरे जड़े हुए थे। इस धनुष को विश्वकर्मा ने विष्णु भगवान के लिए बनाया था। इंद्र का दिया हुआ एक तरकस भी था, जो कभी खाली न होता था और जिसमें तेज बाण भरे हुए थे। फिर सोने के म्यान में रखी हुई एक चमचमाती तलवार भी उनके पास थी। अगस्त्य मुनि ने इन सब अस्त्रों को रामचंद्र को देकर कहा—"हे महाराज, आप इन सब हथियारों को अपने पास रखिये और इनसे दुष्ट राक्षसों का संहार कीजिये।"

रामचंद्र इन अस्त्रों को पाकर बहुत प्रसन्न हुए और अगस्त्य मुनि को प्रणाम करके उनसे विदा ली।

मुनि ने उनको विदा देते हुए कहा—"हे राघव, यहां से एक योजन दूर पर पंचवटी नाम का स्थान है। वह बहुत रमणीक है। उसमें फूल-फल बहुत हैं

और पानी की भी वहां कमी नहीं है। वह सुंदर जंगली पशुओं से भी भरा हुआ है। वहां सीता का भी मन खूब लगेगा। आप वहीं जाकर रहें।" अगस्त्य मुनि की सलाह मानकर रामचंद्र पंचवटी में गये। वहां लक्ष्मण ने पेड़-पौधों से एक सुंदर आश्रम बनाया। तीनों उसी आश्रम में आराम से रहने लगे।

: ४ :

इसके बाद अगस्त्य अपनी पत्नी को लेकर दक्षिण की ओर चल पड़े। वे नदियों, पहाड़ों तथा जंगलों को पार करते हुए ब्रह्मगिरि पर पहुंचे। ब्रह्मगिरि पश्चिम घाट की पहाड़ियों की एक चोटी है और वर्तमान मैसूर राज्य के कुर्ग प्रदेश में पड़ती है। यहां खूब वर्षा होती है और सारा प्रदेश घने जंगलों और सुंदर हरियाली से सदा भरा रहता है। पहाड़ों में नाना प्रकार के मीठे फल, कंद-मूल और शहद खूब मिलते हैं। यहां की शोभा और सुख-सुविधा देखकर अगस्त्य मुनि का मन लुभा गया, कुछ समय तक उन्होंने यहीं रहने का निश्चय किया और एक आश्रम बनाकर रहने लगे।

जिस तरह भगीरथ गंगा को लाये थे, उसी प्रकार दक्षिण की गंगा कावेरी को लाने का श्रेय अगस्त्य मुनि को दिया जाता है। पुराणों में कथा है कि एक बार कैलास पर्वत पर शिवजी ने सब देवताओं की एक सभा

बुलाई। सारे देश के महापुरुष उस सभा में इकट्ठे हुए। इतने महान पुरुषों के एक स्थान पर इकट्ठे होने से देश का संतुलन बिगड़ गया। कैलास पर्वत नीचे धंस गया और दक्षिण भारत ऊपर की ओर उठ गया। तब शिवजी ने अगस्त्य मुनि को बुलाकर कहा, "इतने लोगों के यहां इकट्ठे हो जाने से कैलास पर्वत नीचे की ओर धंसता जा रहा है। तुम दक्षिण में जाओ और देश का समतोल बनाये रखो!"

शिवजी की आज्ञा पाकर महर्षि अगस्त्य दक्षिण की ओर चल पड़े और विंध्य पर्वत को पार करके दक्षिण भारत में आ गये।

कैलास पर्वत पर से विदा होते समय अगस्त्य ने शिवजी से प्रार्थना की कि आप जल का एक ऐसा सोता हमें दीजिए, जिसका जल कभी न सूखे और हम जहां कहीं जायं, स्नान आदि का सुख प्राप्त करके अपनी तपस्या करते रहें।

कहते हैं, उस समय कावेरी नदी कैलास पर्वत पर बहती थी। शिवजी ने आज्ञा दी कि तुम इस नदी को अपने साथ ले जाओ। अगस्त्य ने कावेरी को समेटकर अपने कमंडल में भर लिया। शिवजी की आज्ञा पाकर कावेरी भी उनके कमंडल में समा गई। मुनि महाराज अपने कमंडल को लेकर दक्षिण की ओर चल पड़े। रास्ते

में वह विंध्य पर्वत का सिर नीचा करके, उसको लांघ कर, दक्षिणापथ पर गये। दक्षिण में वे सह्य-पर्वत की चोटी ब्रह्मगिरि पर जा पहुंचे।

उस समय दक्षिण में शूरपद्म नाम का एक असुर राजा राज करता था। वह बड़ा प्रतापी था। देवताओं को हराकर उनपर शासन करता था। उसके डर से देवताओं का राजा इंद्र भी वन में जा छिपा था। वायु देव कहीं दूर भाग गये थे, मेघ तिरोहित हो गये थे और जल बरसना बंद हो गया था। सारी पृथिवी धू-धू करके जलने लगी। यह देखकर इंद्र बहुत दुःखी हुआ। उसी समय नारद मुनि वहां आये। इंद्र ने अपना दुखड़ा उनको सुनाया। नारद ने कहा, "महर्षि अगस्त्य ब्रह्मगिरि पर तपस्या करते हैं। उनके कमंडल में कावेरी नदी छिपी है। यदि तुम किसी तरह उनके कमंडल का जल नीचे गिरा दो तो कावेरी, नदी बनकर बह निकलेगी और लोगों के दुःख दूर हो जायंगे।"

इंद्र ने कहा, "यह काम मेरे बूते का नहीं है। मैं तो अगस्त्य मुनि के पास जाने में भी डरता हूं।"

नारद ने उत्तर दिया, "तुम गणेश से प्रार्थना करो कि वह जाकर किसी प्रकार उस कमंडल के जल को बहा दे। फिर सारी पृथिवी हरी-भरी हो जायगी और जल का अभाव मिट जायगा।"

इंद्र ने ऐसा ही किया। उसने गणेश के पास जाकर अपनी परेशानी बताई और उनको प्रसन्न किया। आखिर गणेश ब्रह्म-पर्वत पर गये। वहां महर्षि अगस्त्य तपस्या कर रहे थे। गणेश ने एक कौवे का रूप धारण किया और अगस्त्य के पास जाकर चुपके से कमंडल को लुढ़का दिया। कमंडल का सारा जल बह



गणेश ने कौवे के रूप में जाकर कमंडल को लुढ़का दिया

गया। कावेरी जो अबतक मुनि के कमंडल में बंद पड़ी थी, सूखी भूमि को हरी-भरी और उपजाऊ बनाती हुई बह पड़ी।

ब्रह्मगिरि से चलकर कावेरी उछलती, कूदती,

अठखेलियां करती, वनों और पर्वतों को लांघती, चोल देश में पहुंची। वहां उसने सहस्रधारा का रूप धारण किया और सारी भूमि को अपने जल से उपजाऊ बनाती हुई समुद्र से जा मिली।

कहीं-कहीं यह भी कथा है कि अगस्त्य की पत्नी लोपामुद्रा ही कावेरी का रूप धारण करके बहने लगी थीं।

: ५ :

कुछ काल तक ब्रह्मगिरि पर रहने के बाद अगस्त्य ऋषि दक्षिण दिशा की ओर चल पड़े। चलते-चलते पांड्य राजाओं के देश में जा पहुंचे।

दक्षिण में ताम्रवर्णी नदी बहती है। उसका जल इतना शुद्ध और स्वच्छ है कि स्वर्ग के देवता भी इसमें स्नान करना चाहते हैं। इसके किनारे पर अनेक तीर्थ हैं और बड़े-बड़े मंदिर हैं। यह नदी अमृत की धारा के समान पश्चिम घाट की पहाड़ियों से निकलकर समुद्र में गिरती है। जिस पश्चिम घाट की पहाड़ी से यह नदी निकलती है, उसीकी एक शिखर पर पहुंचकर महर्षि अगस्त्य ने अपना आश्रम बनाया।

जिस समय अगस्त्य तमिल देश में आये, उस समय इस सारे प्रांत को 'तमिल अहम' कहते थे। उत्तर में इसकी सीमा वेंकटाचल पर्वत (तिरुपति-बालाजी) तक

थी। दक्षिण में इस देश के चरण हिंद महासागर पखारता था। पूरब और पश्चिम में भी दो बड़े विशाल समुद्र इसकी सीमा बने हुए थे।

तमिल देश में पहुंचकर महर्षि अगस्त्य ने जो महान कार्य किया उसको आजतक कोई ऋषि-मुनि नहीं कर सका था। उन्होंने उत्तर और दक्षिण में आर्य संस्कृति और आर्य साहित्य का प्रचार किया। तमिल देश के निवासियों को अनेक शास्त्रों का ज्ञान कराया। तमिल भाषा को सीखकर उसका एक बहुत बड़ा व्याकरण लिखा। कुछ लोगों का यह भी कहना है कि तमिल लिपि अगस्त्य की ही ईजाद की हुई है। सबसे बड़ा काम तो उन्होंने यह किया कि आर्य और द्रविड़ का भेद मिटाकर दोनों संस्कृतियों के बीच समन्वय स्थापित किया और आर्य लोगों के दक्षिण में आने का मार्ग खोल दिया। अगस्त्य के दक्षिण में आने के बाद ही आर्य लोगों को दक्षिण के देशों और यहां के लोगों के बारे में पूरी-पूरी जानकारी मिली। अगस्त्य के दक्षिण में आने के बाद ही रामचंद्र दक्षिण में आये। फिर उन्होंने दक्षिण के देवी-देवताओं की पूजा शुरू की। आर्य लोग अग्नि, इन्द्र, वायु आदि की पूजा करते थे। अगस्त्य ने दक्षिण के देवता मुरुगन (स्कंद) को शिवजी का पुत्र और गणेश का भाई बताकर उन्हें आर्य लोगों का भी देवता

बना दिया। दक्षिण के देवता तिरुमाल, विष्णु बने, ऐय्यप्पन, शास्ता बने और देवी कोर्टवै, काली माई बनीं।

दक्षिण में यह कथा कही जाती है कि पूर्वकाल में बड़े-बड़े ऋषियों ने मिलकर संस्कृत भाषा की उन्नति के लिए एक सभा बुलाई। अगस्त्य भी एक सदस्य थे। संयोग से दूसरे मुनियों के साथ उस सभा में अगस्त्य का मतभेद हो गया। अगस्त्य ने जाकर शिवजी से शिकायत की। उसी समय सभा-मंडप में एक दिव्य सुगंधि फैल गई। उस सुगंधि को जानकर अगस्त्य ने शिवजी से पूछा—



सभा-मंडप में एक दिव्य सुगंधि फैल गई

"महाराज, वह कैसी सुगंधि चारों ओर फैल रही है?" शिवजी ने अगस्त्य को मंडप के एक कोने में पड़ी हुई ताल-पत्रों की ढेरी दिखाई। उसे देखते ही अगस्त्य के मुख से तमिल, तमिल शब्द निकल पड़े, जिसका अर्थ था—'मधुर, मधुर'। उन ताल-पत्रों पर तमिल भाषा का व्याकरण लिखा हुआ था। फिर शिवजी ने अगस्त्य को उस व्याकरण की शिक्षा दी। अगस्त्य उस व्याकरण को लेकर पोदिय मलै पर आये और लोगों में उसका प्रचार किया। उन्होंने तमिल भाषा के दो व्याकरण भी लिखे। लेकिन आजकल अगस्त्य मुनि के लिखे व्याकरण कहीं नहीं मिलते। शायद वे नष्ट हो गये। आजकल इस भाषा का जो सबसे पुराना व्याकरण मिलता है, वह अगस्त्य मुनि के शिष्य तोलकापियर का लिखा है। तोलकापियर भी जाति के ब्राह्मण थे और तमिल भाषा के महान पंडित। इनका जन्म ईसा के पूर्व पांचवीं शताब्दी में माना जाता है।

तमिल साहित्य की उन्नति के लिए अगस्त्य ने कवियों और लेखकों की सभा स्थापित की थी, जिसे 'संघम' कहते थे। इस संघम का केन्द्र-स्थान पांड्य राजाओं की राजधानी मदुरा था। तमिल भाषा के इतिहास में तीन संघमों की कथा मिलती है। प्रथम संघम, द्वितीय संघम और तृतीय संघम। इस संघम का

उद्देश्य कवियों की रचनाओं की परीक्षा करके उनके गुण दोषों को बतलाना था। जिस कवि की रचना संघम के सदस्यों द्वारा स्वीकृत होती, उसका देश में बड़ा मान होता। राजा भी उसका आदर करता और इनाम देता। इसलिए सब कवि अपनी-अपनी रचना संघम के सामने पेश करते। मंडल के सदस्य सब-के-सब बड़े विद्वान और कवि हुआ करते थे। कई पांड्य राजा भी संघम के सदस्य थे और उन्होंने भी तमिल भाषा में ग्रन्थ लिखे थे।

पेदिय मलै की पहाड़ी पर रहकर महर्षि अगस्त्य ने तमिल भाषा और तमिल समाज की बड़ी सेवा की। ये सब बातें इतिहास के युग के पहले की हैं। इसीलिए इतिहासों में इसकी चर्चा नहीं मिलती। पर तमिल पुराणों में जहां-तहां इसका वर्णन मिलता है। आज से एक हज़ार वर्ष पूर्व तमिल देश में कंबन नाम के एक महाकवि पैदा हुए थे। उन्होंने तमिल में एक बहुत बड़ी रामायण लिखी है। उसमें उन्होंने स्थान-स्थान पर अगस्त्य मुनि की प्रशंसा की है।

: ६ :

महर्षि अगस्त्य की ख्याति सिर्फ भारत में ही नहीं है। उन्होंने समुद्री डाकुओं को हराया था और बंगाल की खाड़ी को पार करके लंका, यवद्वीप (जावा), मलय

द्वीप (मलाया), सुवर्ण द्वीप (सुमात्रा), वारुण द्वीप (बोर्नियो) आदि देशों में भी जाकर हिंदू धर्म और हिंदू संस्कृति का प्रचार किया था। आज भी जावा, सुमात्रा, जापान आदि देशों में लोग अगस्त्य को शिव का अवतार मानते हैं और उनकी पूजा करते हैं। जिस तरह हम अपने देश में किसी काम का आरंभ करने के पहले 'श्रीगणेशायनमः' कहकर आरंभ करते हैं उसी तरह पूर्वी द्वीपों में रहनेवाले हिंदू और कहीं-कहीं दूसरे लोग भी 'श्री अगस्त्याय नमो' कहकर नया काम शुरू करते हैं। लंका में पोलोनरुवा में उनकी एक सुंदर मूर्ति एक चट्टान को काटकर बनाई गई है। उसमें वे ताड़ के पत्ते पर लिखी हुई तमिल-व्याकरण की पुस्तक हाथ में लिये खड़े हैं।

महाभारत में एक कथा है कि समुद्र में रहनेवाले राक्षस बड़े शक्तिशाली हो गए। वे समुद्र में यात्रा करने वाले व्यापारियों को मार डालते और रात के समय दक्षिण भारत के पूर्वी किनारे पर आकर लूटपाट मचाते। वे लोगों को सताते, उनका धन छीन लेते, फिर समुद्र में जा छिपते। जब लोग इन राक्षसों के उपद्रवों से तंग आ गये तब उन्होंने जाकर अगस्त्य से प्रार्थना की कि आप समुद्र को सुखा दें, जिससे हम उन राक्षसों के उपद्रव से बच जायं। अगस्त्य ने उनकी प्रार्थना मानकर समुद्र

का सारा जल चुल्लुओं में उठाकर पी लिया। इससे राक्षसों की शक्ति क्षीण हो गई और वे सब-के-सब मारे गये।

इस कथा से हमें मालूम होता है कि अगस्त्य के समय में पूर्वी समुद्र में बहुत से डाकू हो गये थे। वे लोगों को सताया करते थे। अगस्त्य ने उन डाकुओं को हराने के लिए समुद्री बेड़ों का प्रबंध कराया होगा। पीछे चलकर इन्हीं बेड़ों के जरिए अगस्त्य और उनके साथी जावा, सुमात्रा आदि टापुओं में गये होंगे। वहां जाकर उन्होंने हिंदू-संस्कृति, हिंदू-धर्म और वेदों का प्रचार किया होगा। कितने साहस की बात थी यह। उस जमाने में जब आदमी के पास बड़े-बड़े जहाज नहीं थे, युद्ध के सामान नहीं थे, समुद्र को पार करके जाना और दूसरे देशों में जाकर अपने धर्म और संस्कृति का प्रचार करना क्या मामूली बात थी? अगस्त्य के जैसा कोई तपस्वी ही ऐसा साहसपूर्ण कार्य कर सकता था।

अगस्त्य के समय में मदुरा पर पांड्य राजाओं का राज्य था। मदुरा के उत्तर में चोल वंश के राजा राज करते थे। इन दोनों देशों के लोग व्यापार करने में बड़े होशियार थे। वे जहाज बनाना भी जानते थे और उनमें बैठकर कंबोडिया, हिंद-चीन, जापान और चीन देश तक चले जाते थे। वहां जाकर अपने देश के बने

सुंदर कपड़े, हाथी दांत की चीजें, मोती की मालाएं मोरपंख, चंदन आदि की लकड़ी बेचते थे। फिर वहां से बहुत-सा धन लेकर वापस लौटते थे। यह सब अगस्त्य मुनि की ही मेहनत और हिम्मत का फल था।

अगस्त्य मुनि को हुए आज हजारों वर्ष हो गये हैं; लेकिन उनका काम कभी भुलाया नहीं जा सकता। यदि वह हिम्मत करके दक्षिण न गये होते तो कौन जाने, हमारे देश का यह भाग कबतक अनजाना बना रहता। अपने इन्हीं महर्षि की कृपा से आज हम कहते हैं कि हमारा देश उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक फैला हुआ है।

इस महापुरुष के जीवन से हमें सीख मिलती है कि हम अपने देश को जानें, उसे प्यार करें और ऐसे काम करें, जिससे उसका मान बढ़े।

समाज विकास - माला की पुस्तकें

१. बदरीनाथ
२. जंगल की सैर
३. भीष्म पितामह
४. शिवि और दधीचि
५. विनोबा और भूदान
६. कबीर के बोल
७. गांधीजी का विद्यार्थी-जीवन
८. गंगाजी
९. गौतम बुद्ध
१०. निषाद और शबरी
११. गांव सुखी, हम सुखी
१२. कितनी जमीन ?
१३. ऐसे थे सरदार
१४. चैतन्य महाप्रभु
१५. कहावतों की कहानियां
१६. सरल व्यायाम
१७. द्वारका
१८. बापू की बातें
१९. बाहुबली और नेमिनाथ
२०. तंदुरुस्ती हजार नियामत
२१. बीमारी कैसे दूर करें ?
२२. माटी की मूरत जागी
२३. गिरिधर की कुंडलियां
२४. रहीम के दोहे
२५. गीता-प्रवेशिका
२६. तुलसी - मानस - मोती
२७. दादू की वाणी
२८. नजीर की नज्में
२९. संत तुकाराम
३०. हजरत उमर
३१. बाजीप्रभु देशपांडे
३२. तिरुवल्लुवर
३३. कस्तूरबा गांधी
३४. शहद की खेती
३५. कावेरी
३६. तीर्थराज प्रयाग
३७. तेल की कहानी
३८. हम सुखी कैसे रहें ?
३९. गो-सेवा क्यों ?
४०. कैलास-मानसरोवर
४१. अच्छा किया या बुरा ?
४२. नरसी महेता
४३. पंढरपुर
४४. ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती
४५. संत ज्ञानेश्वर
४६. धरती की कहानी
४७. राजा भोज
४८. ईश्वर का मंदिर
४९. गांधीजी का संसार-प्रवेश
५०. ये थे नेताजी
५१. रामेश्वरम्
५२. कब्रों का विलाप
५३. रामकृष्ण परमहंस
५४. समर्थ रामदास
५५. मीरा के पद
५६. मिल-जुलकर काम करो
५७. कालापानी
५८. पावभर आटा
५९. सवेरे की रोशनी
६०. भगवान के प्यारे
६१. हारूं-अल-रशीद
६२. तीर्थंकर महावीर
६३. हमारे पड़ोसी
६४. आकाश की बातें
६५. सच्चा तीरथ
६६. हाजिर जवाबी
६७. सिंहासन-बत्तीसी भाग १
६८. सिंहासन-बत्तीसी भाग २
६९. नेहरूजी का विद्यार्थी - जीवन
७०. मूरखराज
७१. नाना फड़नवीस
७२. गुरु नानक

मूल्य प्रत्येक का छः आना

सस्ता साहित्य मण्डल

सैंतीस नये पैसे